प्रार्थना और प्रहार

प्रफुल्ल कोलख्यान

जिस समय उन पर हमला हुआ था, वे प्रार्थना कर रहे थे। उन्हें पूरी उम्मीद थी कि अंत में प्रार्थना ही पृथ्वी को बचा लेगी। प्रार्थना के बल पर ही सभ्यता बचती आई है अब तक, और आगे भी बचती रहेगी अनंतकाल तक। वे अपने बच्चों को विशेष रूप से शिष्टाचरण के लिए तैयार किये जाने के उद्देश्य को सामने रखकर इस तरह से प्रशिक्षित किये जाने के प्रति जागरुक थे जिसके अंतर्गत बच्चों को स्कूल में अपने शिक्षक से और घर में माता-पिता से प्रार्थना करने का अचूक अभ्यास हो। ऐसा अभ्यास जिस में किसी भी प्रकार के ना-नुकुर के लिए कोई गुंजाइश न हो। उनके हिसाब से सिर्फ प्रार्थी समाज ही सभ्य और शिष्ट कहलाने का वाजिब हकदार हो सकता है। प्रार्थी मिजाज से बाहर सभ्यता और शिष्टता की बात ना-हक है। जिन लोगों ने हमला किया वे भी एक लंबी प्रार्थना के अनुभव से गुजर कर ही निकले थे। उन्हें भी प्रार्थना पर उतना ही यकीन था। वे भी प्रार्थना को जीवन की सार्थकता और सुरक्षा के लिए उतना ही जरूरी मानते थे।

रोटी की गारंटी पाकर बंगाल में आने की बात तो पिता की समझ में आती है लेकिन मेरे बंगाल में बस जाने के निर्णय को कभी वे मन से स्वीकार नहीं कर पाये। वे मेरे साथ स्थिर होकर रहने का मन कभी नहीं बना पाये। समकालीन हिंदी साहित्य से उन्हें उतना ही लेना-देना है जितना लेना-देना एक आम हिंदी भाषी का होता है। निराला के बाद बमुश्किल नागार्जुन तक वे किसी प्रकार आते हैं। उसके बाद उनके लिए साहित्य एक प्रकार का शून्य ही है, जिसमें कुछ खद्योत इत-उत प्रकाश करते हैं। इधर उनके यहाँ रहते, ‘स्वाधीनता’ में मेरी कविता ‘मृत्यु की आशंका भरी रात’ छप कर आई, जिसमें रधुवीर सहाय, रामदास और विशेष प्रार्थना का संदर्भ है। उन्होंने सहज भाव से ही पूछा था कुछेक सवाल। इन सवालों की शृँखला मेरे मन में कुछ इस प्रकार बनी कि, ये रघुवीर सहाय कौन हैं और कौन है उनका रामदास? किसने बता दिया उसे कि उसकी हत्या होगी? क्या बतानेवाले ने हत्यारे का नाम नहीं बताया? और फिर अंतत: क्या हुआ रामदास का? उदास होने की वजहें कम हैं कि रामदास की उदासी के पदचाप के बीच विशेष प्रार्थना में जुट गये सपरिवार? इतने सारे सवालों का जबाव संभवत: उन्हें नहीं चाहिए था लेकिन हमें चाहिए इन सवालों के जवाब। ये सवाल मुझे बहुत परेशान कर रहे हैं। कभी लगता है कि हम लोग ही हैं रघुवीर सहाय, रामदास और हत्यारे भी ।

जिनकी जिंदगी रघुवीर के सहारे चलती है वे राम के दास नहीं होंगे तो और क्या होंगे ? हम ही ने तो बताया था खुद को कि हमारी हत्या होगी, दूसरा कौन बता सकता है यह बात? ऐसा बताकर हमने ही तो खुद को मारा है बार-बार। युद्ध के प्रारंभ के पहले ही वे सारे लोग मारे जा चुके होते हैं जो नहीं होते हैं विशेष कृपापात्र। बतला दिया था कृष्ण ने और मान लिया था विराट रूप के वशीभूत हो चुके अर्जुन ने। अर्जुन के लिए युद्ध क्रीड़ा में बदल चुका था अपनी प्रार्थना का परिणाम जान लेने के बाद।

तब-तब बहुत याद आते हैं राजेश जोशी जब-जब लौटने लगता है एहसास अपने आस-पास कि सचमुच हम निरपराध हैं और निहत्थे भी। लगने लगता है कभी-कभी कि हम मार दिये जायेंगे नहीं बल्कि मार दिये जा चुके हैं। नहीं तो, हमारा मुँह क्यों नहीं खुलता है भाई। खुलता है तो उससे कोई आवाज क्यों नहीं निकलती, आवाज निकलती है तो कोई हुँकारी क्यों नहीं भरता, कोई हुँकारी भरता है तो सुनाई क्यों नहीं देती वह आवाज जो करा जाये जिंदा बचे रह जाने का एहसास। मन करता है चिल्लाकर कहूँ कि हाँ बाबा, हाँ, तरुणों के डाकू बन जाने की स्थिति दिन-ब-दिन और अटल ही होती जा रही है। अब सत्ता के शिखर से राष्ट्र के सेवक सरेआम कहते हैं हथियार जुगाड़ो कानून की चिंता मत करो। विपक्षी मानसिकता से उबरो, सत्ता की भाषा को समझो। सिमटी बाँहों को खोलो गरुड़, और उड़ने का अंदाज बदलो। कानून तो कमजोरों के काम आनेवाले हथियार का नाम है। तुम जोरावर हो जयी बनो, कानून तुम्हारे किस काम का? जहाँ जिस किसी चीज से असहमति हो उसे रौंद डालो, यही आम सहमति है। आम सहमति है कि आतंकवाद से लड़ना है, तुम आतंकवाद से लड़ने की तैयारी करो, तात। अनंत न्याय के विश्वव्यापी यज्ञ में कुछ खाँटी स्वदेशी ऐतिहासिक समिधा अपनी ओर से भी डालने की कोशिश करो वत्स ताकि विश्व का कल्याण हो।

प्रार्थना में ही छिपा हुआ रहता है प्रहार। मनुष्य के विकास के साथ-साथ प्रार्थना एकत्रित और संगठित होकर जुनून बन सकने की आशंका के निकटतर होती जाती है। प्रार्थना प्राण का कवच नहीं बन सकती। प्रार्थना चाहे जितनी विशिष्ट क्यों न हो वह अंतत: रिरियाहट ही होती है। एक ऐसी रिरियाहट जिसकी कोख में पलती रहती है बर्बरता। किसी कल्पित देवता के सामने रिरियाने के अभ्यास की सामाजिक उपयोगिता बस यही है कि साधारण आदमी सीख लेता है अपने पुरुषार्थ और प्रयास को स्थगित करना और पारंगत होता चलता है कृपापात्र बनने की कला में। विनम्रता के आवरण में दैन्य को मूल्य बनाकर जीने की व्यावहारिकता में होता जाता है निष्णात। न दैन्यम, न पलायनम के उद्घोष का मर्म यही होता है कि वीर राष्ट्र सेवक ऐसी ही घड़ी में प्रार्थना की कोख से निकली बर्बरता से करते हैं प्रत्येक प्राणवंत पर प्राणांतक प्रहार; प्रार्थना पर प्रार्थना का प्रहार!

रघुवीर सहाय ने ‘प्रार्थना घर’ को विज्ञापनबाजी की जगह बनाये जाने की प्रवृत्ति के नतीजों के बारे में तब सचेत किया था। लेकिन कहाँ मानता है बाजार में रमा मन! युद्ध का मैदान हो कि प्रार्थना घर, हर जगह विज्ञापन की महिमा राजती है। लगता है, प्रार्थना के इस शिल्प का नहीं है दूर-दूर तक कोई विकल्प, उबर नहीं पाये तो एक-न-एक दिन प्रार्थना करते हुए मारे जायेंगे हम सभी, प्रार्थना कर चुके लोगों के हाथ। ऐसा नहीं था हमारा ‘प्रार्थना समाज’। त्रासद यह है कि जिन्हें इस प्रकार की किन्हीं प्रार्थनाओं पर कभी कोई यकीन नहीं रहा वे इस ओर से आज भी प्रार्थना की अंतर्ध्वनियों में छिपी सुरलिपि के करुण अंतर्भाष्य का छोर पकड़ने की कोशिश नहीं कर पा रहे हैं।